Shodh Sangam Patrika
E-ISSN: 3049-0707, Volume 3 | Issue 4 | (October - December 2026)

भारतीय पारंपरिक एवं आधुनिक संगीत का युवा पीढ़ी के मानसिक स्वास्थ्य, व्यवहार एवं जीवनशैली पर प्रभाव: एक तुलनात्मक अध्ययन

आस्था शर्मा
शोधार्थी, संगीत (गायन), लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी, फगवाड़ा, पंजाब, भारत

सारांश

भारतीय युवाओं के दैनिक जीवन में संगीत का स्थान तेजी से बदल रहा है। राग, लोकगीत, भजन और सामूहिक गायन जैसी परंपराओं के साथ फिल्मी गीत, पॉप, रैप तथा डिजिटल मंचों पर उपलब्ध स्वतंत्र संगीत भी उनके अनुभव का हिस्सा हैं। प्रस्तुत समीक्षा लेख का उद्देश्य पारंपरिक एवं आधुनिक संगीत के मानसिक स्वास्थ्य, व्यवहार और जीवनशैली से जुड़े संभावित संबंधों का तुलनात्मक अध्ययन करना है। इसके लिए संगीतशास्त्र, संगीत-मनोविज्ञान, संगीत-शिक्षा और मीडिया पर हिंदी में प्रकाशित पुस्तकों तथा शोध-लेखों को प्राथमिक आधार बनाया गया है; चुनिंदा अंतरराष्ट्रीय अनुभवजन्य अध्ययनों को केवल प्रमाण की सीमाएँ समझने के लिए शामिल किया गया है। विषयगत विश्लेषण से पता चलता है कि पारंपरिक संगीत सांस्कृतिक पहचान, नियमित अभ्यास और सामूहिक भागीदारी का अवसर देता है, जबकि समकालीन संगीत व्यक्तिगत अभिव्यक्ति, साथी समूहों से जुड़ाव और डिजिटल सृजन के नए रास्ते खोलता है। दोनों के भावनात्मक अनुभव सुनने वाले की पसंद, सामाजिक पृष्ठभूमि, शब्दों, लय, ध्वनि की तीव्रता और सुनने की परिस्थिति के अनुसार बदल सकते हैं। संगीत और मानसिक स्वास्थ्य पर उपलब्ध बहुत-से हिंदी लेख व्याख्यात्मक हैं; इसलिए उनमें व्यक्त लाभों को सार्वभौमिक चिकित्सकीय निष्कर्ष नहीं माना जा सकता। अध्ययन का निष्कर्ष है कि दोनों संगीत-रूपों को विरोधी मानने के बजाय उनके उपयोग, शिक्षण और सुरक्षित श्रवण के संदर्भ में देखना अधिक उपयोगी है। यह मौजूदा साहित्य पर आधारित समीक्षा है; इसमें नया सर्वेक्षण अथवा प्रयोग शामिल नहीं है।

मुख्य शब्द: भारतीय संगीत, पारंपरिक संगीत, आधुनिक संगीत, युवा पीढ़ी, मानसिक स्वास्थ्य, भावनात्मक नियमन, सामाजिक व्यवहार, डिजिटल जीवनशैली

1. भूमिका

संगीत के साथ युवा पीढ़ी का रिश्ता अब किसी एक अवसर अथवा स्थान तक सीमित नहीं है। घर में सुना गया भजन, किसी उत्सव में गाया गया लोकगीत, संगीत विद्यालय का रियाज़ और मोबाइल पर चलने वाला नया गीत—ये अनुभव एक ही दिन में एक-दूसरे के साथ मौजूद हो सकते हैं। बदलती तकनीक ने धुनों तक पहुँच सरल बनाई है, पर साथ ही सुनने की अवधि, पसंद व्यक्त करने के तरीकों और दोस्तों के साथ संगीत साझा करने की आदतों को भी बदला है। इसलिए यह प्रश्न महत्त्वपूर्ण है कि संगीत केवल मनोरंजन देता है या वह युवाओं की भावनात्मक स्थिति, सामाजिक व्यवहार तथा दिनचर्या से भी जुड़ता है।

भारतीय पारंपरिक संगीत का दायरा केवल शास्त्रीय गायन तक सीमित नहीं है। इसमें राग-आधारित प्रस्तुतियाँ, लोकधुनें, भजन, कीर्तन और अनेक क्षेत्रीय परंपराएँ सम्मिलित हैं। दूसरी ओर, आधुनिक संगीत में फिल्मी गीत, पॉप, रैप, स्वतंत्र संगीत और मिश्रित शैली की रचनाएँ आती हैं। यह विभाजन अध्ययन की सुविधा के लिए है; वास्तव में

आधुनिक रचनाओं में भी राग, लोकताल और भक्ति-कविता के तत्व दिखाई देते हैं। पारंपरिक संगीत स्वयं डिजिटल माध्यमों से नई पीढ़ी तक पहुँच रहा है। कौर (2025), पाण्डेय और मिश्र (2025) तथा रेनू गुप्ता (2026) के लेख इस बदलते संगीत-संचार एवं संगीत-शिक्षण की पृष्ठभूमि समझने में उपयोगी हैं।

मानसिक स्वास्थ्य का संबंध केवल किसी रोग की अनुपस्थिति से नहीं, बल्कि भावनाओं को समझने, तनाव का सामना करने, संबंधों को निभाने और दैनिक कार्यों में संतुलन बनाए रखने से भी है। सुनने वाला व्यक्ति कभी शांत धुन चुनता है और कभी तेज लय; कभी वह किसी गीत में अपना अनुभव पहचानता है, तो कभी सामूहिक गायन से जुड़ाव महसूस करता है। किंतु किसी संगीत-विधा को सुनने मात्र से मानसिक स्वास्थ्य में निश्चित सुधार होगा, ऐसा कहना वैज्ञानिक रूप से उचित नहीं। इसी सावधानी के साथ इस लेख में 'प्रभाव' का अर्थ संभावित संबंध और उपयोग की परिस्थिति है, न कि हर जगह सिद्ध कारणात्मक परिणाम।

यह अध्ययन मुख्यतः किशोर और उभरते वयस्क आयु-वर्ग की संगीत-रुचियों को केंद्र में रखता है। अलग-अलग प्रकाशित स्रोतों में बच्चों, सामान्य वयस्कों, विद्यार्थियों तथा रोगियों पर चर्चा मिलती है। इन समूहों की आवश्यकताएँ अलग हैं; इसलिए किसी एक आयु-वर्ग अथवा चिकित्सकीय परिस्थिति का निष्कर्ष सीधे भारतीय युवा आबादी पर लागू नहीं किया गया है। इस सीमाबोध से साहित्य में व्यक्त सांस्कृतिक विचारों और मापे गए मनोवैज्ञानिक परिणामों के बीच आवश्यक अंतर बना रहता है।

2. संबंधित साहित्य की समीक्षा

हिंदी संगीतशास्त्रीय साहित्य ने संगीत और मन के संबंध पर लंबे समय से विचार किया है। नाहर (1999) की पुस्तक भारतीय शास्त्रीय संगीत के मनोवैज्ञानिक आयामों को केंद्र में रखती है। तिवारी (2008) ने संगीत एवं मनोविज्ञान के अंतर्संबंध को एक स्वतंत्र अध्ययन-विषय के रूप में प्रस्तुत किया। वर्मा (2004) ने संगीत-चिकित्सा पर चर्चा की है। इन कृतियों का महत्त्व वैचारिक और अनुशासनगत पृष्ठभूमि प्रदान करने में है; केवल पुस्तक के शीर्षक या परंपरागत मान्यता के आधार पर किसी विशिष्ट राग का उपचारात्मक प्रभाव प्रमाणित नहीं माना जा सकता।

हाल के हिंदी शोध-लेख इस विमर्श को कई दिशाओं में ले जाते हैं। हनुमान प्रसाद गुप्ता (2025) ने संगीत तथा मनोविज्ञान के अंतःविषयी संबंधों पर चर्चा की, जबकि कुमारी और शाह (2026) ने सामान्य संगीत-अनुभव तथा व्यवस्थित संगीत-चिकित्सा के बीच अंतर रेखांकित किया। यादव (2026) ने रागों और मानसिक स्वास्थ्य के विषय का विवेचन किया है। गुप्ता और रानी (2026) ने स्वास्थ्य संवर्धन के सांस्कृतिक आयामों पर विचार किया। इन लेखों में संगीत की उपयोगिता के संबंध में अनेक सकारात्मक तर्क मिलते हैं, लेकिन उनका स्वरूप प्रायः विवेचनात्मक है। इसलिए चिकित्सकीय परिणाम, औषधीय विकल्प या प्रत्येक व्यक्ति पर एक जैसा असर होने की बात इन्हीं स्रोतों से स्थापित नहीं होती।

लोकसंगीत के प्रसंग में हनुमान प्रसाद गुप्ता (2026) ने लोक-परंपराओं, सामुदायिक स्मृतियों और मानसिक स्वास्थ्य के संभावित संबंधों का वर्णन किया। कुमार (2026) का अध्ययन संगीत के माध्यम से सामाजिक जागरण की भूमिका पर केंद्रित है। इनसे यह संकेत मिलता है कि गीत की सामूहिकता, भाषा तथा सांस्कृतिक निकटता को केवल ध्वनि के गुणों से अलग नहीं किया जा सकता। भजन या लोकगीत से मिलने वाला अपनापन कई बार पारिवारिक अनुभव, पर्व-परंपरा या साझा स्मृति से भी जुड़ा हो सकता है। इसे मापे बिना केवल सुर-लय को सामाजिक परिणाम का कारण कहना कठिन है।

संगीत-शिक्षा और पीढ़ियों के संबंध पर साहा (2011, 2012) ने विद्यालयी पाठ्यक्रम तथा विद्यार्थियों के विकास की चर्चा की। रेनू गुप्ता (2026) ने गुरु-शिष्य परंपरा और डिजिटल शिक्षण के अंतर्संबंध को सामने रखा। सिंह (2026) ने युवा पीढ़ी में ठुमरी के प्रति रुचि का सांस्कृतिक अध्ययन प्रस्तुत किया। इन रचनाओं से स्पष्ट होता है कि संगीत-रुचि स्थिर नहीं रहती; पहुँच, प्रस्तुति-शैली, अभ्यास का अवसर और डिजिटल परिचय जैसे कारक किसी विधा से जुड़ने की संभावना बदल सकते हैं।

आधुनिक संगीत के प्रसार को समझने में कौर (2025) तथा पाण्डेय और मिश्र (2025) के अध्ययन विशेष रूप से प्रासंगिक हैं। उनके विवेचन में इलेक्ट्रॉनिक और डिजिटल माध्यम संगीत को संगृहीत, प्रसारित तथा लोकप्रिय बनाने वाले कारकों के रूप में सामने आते हैं। किंतु संगीत का अधिक उपलब्ध होना और उससे किसी विद्यार्थी को मनोवैज्ञानिक लाभ होना अलग प्रश्न हैं। डिजिटल मंचों पर देखे जाने की इच्छा, साथियों की टिप्पणियाँ और संगीत सुनते समय होने वाली अन्य स्क्रीन-गतिविधियों को भी स्वतंत्र रूप से समझना आवश्यक है।

अंतरराष्ट्रीय अनुभवजन्य साहित्य इस चर्चा में उपयोगी सावधानी जोड़ता है। सारिकाल्लियो और एर्क्किला (2007) ने किशोरों में संगीत के द्वारा मनोदशा नियमन के अनेक तरीके पहचाने; मैकफेरन (2016) ने बताया कि संगीत और युवाओं की भलाई का संबंध संदर्भ-संवेदनशील है। डी विट्टे एवं सहकर्मियों (2020) की व्यवस्थित समीक्षा संगीत-आधारित हस्तक्षेपों के तनाव-संबंधी परिणामों पर केंद्रित है। ये अध्ययन मुख्यतः गैर-भारतीय अथवा विविध नैदानिक संदर्भों से आते हैं। इन्हें हिंदी संगीत-साहित्य के स्थान पर नहीं, बल्कि दावों के प्रमाण-स्तर को परखने वाले पूरक स्रोत के रूप में प्रयुक्त किया गया है।

उपलब्ध सामग्री में एक शोध-अंतर सामने आता है: पारंपरिक एवं आधुनिक भारतीय संगीत का एक समान युवा समूह, समान अवधि और तुलनीय मानसिक स्वास्थ्य मापों के आधार पर प्रत्यक्ष परीक्षण सीमित है। अधिकतर हिंदी लेख सांस्कृतिक, शिक्षाशास्त्रीय या व्याख्यात्मक दृष्टि से लिखे गए हैं; विदेशी मनोवैज्ञानिक अध्ययनों में भारतीय संगीत-विधाओं का पृथक विश्लेषण कम मिलता है। प्रस्तुत समीक्षा इन दोनों धाराओं को जोड़ते हुए संभावनाओं और प्रमाण की सीमाओं के बीच संतुलित तुलना का प्रयास करती है।

3. अध्ययन के उद्देश्य एवं विधि

इस अध्ययन के चार परस्पर जुड़े उद्देश्य हैं: पारंपरिक और आधुनिक संगीत की प्रासंगिक विशेषताओं को स्पष्ट करना; भावनात्मक अनुभव एवं मानसिक स्वास्थ्य से उनके संभावित संबंधों की तुलना करना; सामाजिक व्यवहार, सांस्कृतिक पहचान और दिनचर्या के संदर्भ में अंतर तथा समानता समझना; और उपलब्ध प्रमाणों की सीमा के आधार पर शिक्षा एवं भविष्य के अनुसंधान हेतु उपयुक्त सुझाव प्रस्तुत करना। उद्देश्य किसी एक संगीत-शैली को श्रेष्ठ घोषित करना नहीं, बल्कि संगीत के उपयोग का संदर्भ समझना है।

यह शोध कथात्मक, तुलनात्मक एवं आलोचनात्मक साहित्य-समीक्षा के रूप में तैयार किया गया है। हिंदी में प्रकाशित संगीतशास्त्र, संगीत-मनोविज्ञान, संगीत-शिक्षा, लोकसंगीत और मीडिया संबंधी पुस्तकों तथा शोध-लेखों को प्राथमिकता दी गई। संबंधित पत्रिकाओं के उपलब्ध अंक, राष्ट्रीय शैक्षिक शोध और प्रशिक्षण परिषद की हिंदी पत्रिका में प्रकाशित लेख और चयनित पुस्तकीय अभिलेखों के आधार पर विषयगत सामग्री चुनी गई। प्रमाण-स्तर की तुलना के लिए कुछ अंग्रेज़ी अनुभवजन्य समीक्षाएँ ली गईं। स्रोतों को भावनात्मक अनुभव, सामाजिक-सांस्कृतिक व्यवहार तथा दैनिक जीवनशैली के तीन समूहों में पढ़ा गया।

यह पूर्व-पंजीकृत व्यवस्थित समीक्षा, मेटा-विश्लेषण अथवा नया क्षेत्रीय सर्वेक्षण नहीं है। स्रोतों का चयन विषयगत प्रासंगिकता और प्रकाशन की पहचान के आधार पर किया गया; सभी उपलब्ध शोधों का पूर्ण संकलन करने का दावा नहीं है। मूल प्रतिभागियों से कोई जानकारी नहीं जुटाई गई तथा कोई प्रयोग आयोजित नहीं किया गया। इसलिए यहाँ 'परिणाम' शब्द प्रकाशित साहित्य से निकले तुलनात्मक निष्कर्षों को दर्शाता है, नए आँकड़ों या सांख्यिकीय परीक्षण को नहीं।

4. तुलनात्मक विश्लेषण: मानसिक स्वास्थ्य, व्यवहार और जीवनशैली

पारंपरिक संगीत का एक विशिष्ट गुण उसकी स्मृति और प्रसंग से गहरी संबद्धता है। किसी युवा के लिए बचपन में सुना गया लोकगीत केवल ध्वनि नहीं, परिवार और स्थान की याद भी हो सकता है। भजन और कीर्तन में सामूहिक स्वर तथा दोहराव का अनुभव मिलता है, जबकि राग-संगीत के अभ्यास में स्वर पर ध्यान, धैर्य और लय के प्रति सजगता की आवश्यकता होती है। नाहर (1999), तिवारी (2008) और हनुमान प्रसाद गुप्ता (2026) इन पक्षों की वैचारिक चर्चा के लिए आधार प्रदान करते हैं। मगर इन अनुभवों से मिलने वाला संतोष और चिकित्सकीय अर्थ में चिंता या अवसाद में कमी—दो अलग प्रकार के निष्कर्ष हैं।

आधुनिक संगीत युवाओं की तत्काल अनुभूतियों, बदलती भाषा और सामाजिक प्रश्नों को व्यक्त करने की क्षमता रखता है। समकालीन फिल्मी गीत, रैप या स्वतंत्र संगीत में दोस्ती, अकेलापन, आकांक्षा, असहमति और उत्सव जैसे विषय अक्सर सामने आते हैं। कोई गीत व्यक्ति को अपनी भावनाएँ पहचानने में सहायक हो सकता है, पर वही गीत किसी दूसरे श्रोता में अप्रिय स्मृति या बेचैनी भी जगा सकता है। सारिकाल्लियो और एर्क्किला (2007) के मनोदशा-नियमन संबंधी अध्ययन तथा मैकफेरन (2016) का आलोचनात्मक संश्लेषण इसी व्यक्ति-विशेष और परिस्थिति-विशेष के अंतर की ओर ध्यान खींचते हैं।

भावनात्मक पक्ष की तुलना से यह निष्कर्ष नहीं निकलता कि धीमी रचना सदा लाभकारी और तेज रचना सदा हानिकारक होती है। एक विद्यार्थी परीक्षा से पहले परिचित राग-संगीत सुनकर सहज हो सकता है, तो दूसरा किसी ऊर्जावान गीत से तैयारी के लिए उत्साहित हो सकता है। पसंद, गीत के शब्द, ध्वनि का स्तर, सुनने का उद्देश्य और पहले से उपस्थित मनोदशा परिणाम बदल सकते हैं। यादव (2026) रागों के संभावित मानसिक प्रभाव पर चर्चा करती हैं; कुमारी और शाह (2026) संगीत के मनोवैज्ञानिक तथा चिकित्सकीय संदर्भों का अंतर बताते हैं। इन लेखों को प्रयोग-सिद्ध सार्वभौमिक नियमों की सूची की तरह पढ़ना उचित नहीं।

सामाजिक व्यवहार में पारंपरिक संगीत अक्सर साझा अवसरों से जुड़ा दिखाई देता है। लोकगीतों का सामूहिक गायन, भजन-मंडली, गुरु-शिष्य संवाद और सांस्कृतिक समारोह सामूहिक उपस्थिति के अवसर बनाते हैं। हनुमान प्रसाद गुप्ता (2026) ने लोकसंगीत की सांस्कृतिक निकटता का विवेचन किया है; कुमार (2026) ने सामाजिक चेतना के निर्माण में संगीत की भूमिका पर विचार किया है। इस प्रकार संगीत का महत्त्व केवल श्रोता की व्यक्तिगत प्रतिक्रिया में नहीं, बल्कि समूह में भाग लेने और दूसरों की बात सुनने की प्रक्रिया में भी हो सकता है। फिर भी प्रत्येक सामूहिक कार्यक्रम से समान सामाजिक लाभ होने का दावा नहीं किया जा सकता।

आधुनिक संगीत में सामाजिकता के नए स्थान दिखाई देते हैं। कॉलेज बैंड, साझा प्लेलिस्ट, ऑनलाइन सहयोग और मंचीय प्रस्तुतियाँ मित्रों को अभिव्यक्ति का अवसर देती हैं। डिजिटल वितरण के कारण किसी सीमित क्षेत्र की रचना भी दूर बैठे श्रोताओं तक पहुँच सकती है। कौर (2025), पाण्डेय और मिश्र (2025) तथा रेनू गुप्ता (2026) के अध्ययनों

में संगीत, माध्यम और शिक्षण के इस बदलते संबंध की व्याख्या मिलती है। पर ऑनलाइन लोकप्रियता का दबाव, असहमति पर होने वाली प्रतिक्रिया और लगातार तुलना भी युवाओं के अनुभव का हिस्सा बन सकते हैं। इन बातों को संगीत की किसी शैली का स्वभाव मानने के बजाय डिजिटल वातावरण से जोड़कर समझना चाहिए।

पीढ़ियों के बीच संवाद की दृष्टि से पारंपरिक और आधुनिक संगीत को विरोधी श्रेणियों में रखना सीमित दृष्टिकोण होगा। सिंह (2026) ने ठुमरी के प्रति युवाओं की रुचि के संदर्भ में आधुनिक माध्यमों की भूमिका बताई। इससे यह प्रश्न उठता है कि पारंपरिक रचनाओं को आज के श्रोता तक पहुँचाने में प्रस्तुति, शब्दार्थ और डिजिटल परिचय किस प्रकार सहायता कर सकते हैं। दूसरी ओर, आधुनिक गीतों में लोकस्वर, शास्त्रीय आलाप या क्षेत्रीय भाषाओं का उपयोग अनेक सांस्कृतिक स्तरों के बीच संवाद का अवसर प्रदान करता है। तुलना का उचित आधार परंपरा की आयु नहीं, बल्कि अनुभव की गुणवत्ता और उसके सामाजिक संदर्भ हैं।

दैनिक जीवन में संगीत का उपयोग पढ़ाई, यात्रा, खेल, अवकाश और नींद से पहले के समय में भिन्न रूप लेता है। पारंपरिक संगीत सीखने वाला विद्यार्थी नियमित रियाज़ के लिए समय निर्धारित कर सकता है; आधुनिक संगीत से जुड़ा युवा रिकॉर्डिंग, गीत-लेखन या डिजिटल निर्माण में सक्रिय हो सकता है। दोनों में रचनात्मक अनुशासन की संभावना है। साहा (2011, 2012) के शैक्षिक लेख और रेनू गुप्ता (2026) का संगीत-शिक्षण संबंधी अध्ययन इन अनुभवों के लिए उपयुक्त वैचारिक आधार देते हैं। फिर भी नियमित अभ्यास करने वालों और कभी-कभार सुनने वालों को एक ही समूह मानकर ध्यान अथवा उपलब्धि की तुलना करना भ्रामक होगा।

पढ़ाई करते समय संगीत सुनने के प्रभाव पर सामान्य सलाह देना सरल है, पर विश्वसनीय निष्कर्ष निकालना कठिन है। शब्द-प्रधान गीत कुछ कार्यों में ध्यान बाँट सकते हैं, जबकि परिचित धुन अन्य परिस्थितियों में व्यवधान नहीं बनती। कठिन पाठ पढ़ना, गणना करना और हल्का शारीरिक काम करना अलग संज्ञानात्मक गतिविधियाँ हैं। इसलिए केवल ‘शास्त्रीय’ या ‘आधुनिक’ नाम के आधार पर अध्ययन-क्षमता का आकलन नहीं किया जा सकता। इसी तरह देर रात संगीत सुनने का प्रभाव अलग और संगीत के साथ देर तक फोन चलाते रहने की आदत अलग हो सकती है; दोनों को शोध में स्वतंत्र रूप से मापना चाहिए।

ध्वनि की ऊँचाई और सुनने की अवधि जीवनशैली का ऐसे पहलू हैं जिन पर दोनों संगीत-रूपों के लिए एक समान सावधानी आवश्यक है। अत्यधिक तेज़ ध्वनि को लंबे समय तक सुनने से श्रवण-स्वास्थ्य के लिए जोखिम बढ़ सकता है, चाहे प्रस्तुति राग-संगीत की हो या लोकप्रिय संगीत की। उच्च ध्वनि-स्तर वाले कार्यक्रम, लंबे समय तक ईयरफ़ोन का उपयोग और बिना विराम सुनना ऐसी परिस्थितियाँ हैं जिनमें व्यक्तिगत पसंद से अधिक श्रवण-सुरक्षा महत्त्वपूर्ण हो जाती है। इसलिए संगीत-आधारित कल्याण की चर्चा करते समय समय-प्रबंधन, विराम और सुरक्षित श्रवण-आदतों को भी शामिल करना चाहिए।

संगीत सुनना और संगीत बनाना एक ही प्रकार की सहभागिता नहीं हैं। राग का अभ्यास स्वर और ताल पर लगातार ध्यान माँगता है, लोकगायन में सामूहिक उत्तरदायित्व प्रकट होता है और आधुनिक बैंड या डिजिटल रिकॉर्डिंग में सहयोग तथा तकनीक सीखने की भूमिका रहती है। कुमारी और शाह (2026) ने सामान्य संगीत-अनुभव और लक्ष्य-आधारित चिकित्सकीय हस्तक्षेप को अलग-अलग समझने पर बल दिया है। इसी आधार पर किसी विश्वविद्यालय में खुली संगीत-कार्यशाला, प्रशिक्षित संगीत-चिकित्सा तथा व्यक्तिगत प्लेलिस्ट सुनने को एक जैसी गतिविधि समझना उचित नहीं होगा।

5. निष्कर्षों की चर्चा, शैक्षिक निहितार्थ एवं सीमाएँ

समीक्षा से तीन व्यापक बातें उभरती हैं। पहली, मानसिक स्वास्थ्य और संगीत का संबंध बहुकारकीय है: श्रोता की पसंद, निजी स्मृति, सामूहिकता और सुनने का समय अनुभव को दिशा देते हैं। दूसरी, परंपरागत संगीत सांस्कृतिक संबद्धता का और समकालीन संगीत निजी तथा डिजिटल अभिव्यक्ति का प्रमुख माध्यम बन सकता है, लेकिन दोनों में ये संभावनाएँ एक-दूसरे से अलग नहीं हैं। तीसरी, अधिकांश उपलब्ध हिंदी सामग्री विचारपरक और वर्णनात्मक है; उससे बिना नियंत्रित तुलना के किसी एक शैली की श्रेष्ठता या निश्चित चिकित्सकीय प्रभाव स्थापित नहीं किया जा सकता। यह निष्कर्ष हिंदी संगीत-अध्ययनों की सांस्कृतिक अंतर्दृष्टि को कम नहीं करता, बल्कि उनके प्रमाण-क्षेत्र को अधिक स्पष्ट बनाता है।

विद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों के लिए व्यावहारिक संकेत यह है कि संगीत-शिक्षा में राग, लोकगीत, भक्ति-संगीत, समकालीन गीत और संगीत-निर्माण को संवाद के अवसरों के रूप में रखा जा सकता है। साहा (2011, 2012) के शैक्षिक विचारों तथा रेनू गुप्ता (2026) की डिजिटल शिक्षण संबंधी चर्चा को आधार बनाकर ऐसे कार्यक्रम विकसित किए जा सकते हैं जिनमें विद्यार्थी सुनें, अभ्यास करें, अपने अनुभवों पर विचार करें और अन्य शैलियों का सम्मान करना सीखें। इन कार्यक्रमों के संभावित लाभों का मूल्यांकन उपस्थिति, सहभागिता, अभिव्यक्ति और स्वयं-रिपोर्ट किए गए अनुभव जैसे स्पष्ट मानकों पर किया जाना चाहिए।

मानसिक स्वास्थ्य के संदर्भ में संगीत को स्वैच्छिक सहायक गतिविधि के रूप में देखना अधिक जिम्मेदार दृष्टिकोण है। जिस युवा को कोई रचना असहज करती हो, उसकी प्रतिक्रिया का सम्मान किया जाना चाहिए। लगातार तीव्र चिंता, अवसाद या अन्य परेशानी की स्थिति में प्रशिक्षित पेशेवर सहायता आवश्यक है; सामान्य संगीत-श्रवण उसका विकल्प नहीं है। डी विट्टे एवं सहकर्मियों (2020) का विश्लेषण कुछ लक्ष्य-आधारित संगीत हस्तक्षेपों में तनाव-संबंधी लाभ दर्शाता है, लेकिन इससे प्रत्येक हिंदी या आधुनिक गीत के सार्वभौमिक चिकित्सकीय प्रभाव का निष्कर्ष नहीं निकलता।

इस समीक्षा की मुख्य सीमा स्रोतों की विषमता है। विभिन्न लेख संगीत की अलग परिभाषाएँ और अलग लक्षित समूह लेते हैं; कई में व्यवस्थित नमूना, समान माप या नियंत्रण-समूह नहीं है। समीक्षा स्वयं नया सर्वेक्षण प्रस्तुत नहीं करती और सभी उपलब्ध प्रकाशनों को शामिल करने का दावा भी नहीं करती। आगे के शोध में भारतीय महाविद्यालयों के युवाओं के बीच संगीत की पसंद, प्रशिक्षण, श्रवण-अवधि, स्क्रीन-अभ्यास, मानकीकृत तनाव-माप, सामाजिक जुड़ाव और नींद जैसे पहलुओं को साथ लेकर अध्ययन उपयोगी होगा। प्रतिभागियों की सहमति, निजी जानकारी की सुरक्षा और आवश्यक नैतिक स्वीकृति को ऐसी योजना का भाग बनाया जाना चाहिए।

6. निष्कर्ष

भारतीय पारंपरिक और आधुनिक संगीत दोनों युवा जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं, पर उनका अनुभव केवल धुन या शैली से तय नहीं होता। राग, भजन और लोकगीत सांस्कृतिक पहचान, पारिवारिक स्मृति तथा सामूहिक सहभागिता के अवसर देते हैं। फिल्मी संगीत, रैप, पॉप और स्वतंत्र रचनाएँ युवाओं को अपनी भाषा में भावनाएँ व्यक्त करने, नए समूहों से जुड़ने और डिजिटल माध्यमों पर सृजन करने का रास्ता देती हैं। प्रस्तुत साहित्य-समीक्षा का प्रमुख निष्कर्ष यह है कि संगीत और मानसिक स्वास्थ्य के संबंध को श्रोता की पसंद, सामाजिक परिवेश, शब्द, लय, गतिविधि तथा सुनने की अवधि के साथ समझना चाहिए। हिंदी में प्रकाशित शोध-साहित्य संगीत के सांस्कृतिक, शैक्षिक और मनोवैज्ञानिक महत्त्व को सामने लाता है, लेकिन उसके अनेक निष्कर्ष व्याख्यात्मक हैं। इसलिए किसी विशेष राग या

आधुनिक गीत को तनाव, अवसाद अथवा अनिद्रा का निश्चित उपचार बताना उचित नहीं है। शिक्षण संस्थानों में विविध संगीत-परंपराओं का सम्मान, नियमित रचनात्मक सहभागिता और सुरक्षित ध्वनि-स्तर को बढ़ावा दिया जा सकता है। भविष्य में भारतीय युवाओं पर स्पष्ट नमूना-चयन, समान श्रवण-अवधि और विश्वसनीय मानसिक स्वास्थ्य मापों के साथ तुलनात्मक अनुसंधान आवश्यक होगा। इस अध्ययन का योगदान किसी एक विधा की श्रेष्ठता सिद्ध करना नहीं, बल्कि परंपरा, आधुनिकता और युवा अनुभव के बीच अधिक संवेदनशील एवं प्रमाण-सचेत संवाद स्थापित करना है।

हितों का टकराव तथा शोध संबंधी घोषणा

लेखिका की जानकारी के अनुसार इस समीक्षा लेख के संबंध में कोई हित-संघर्ष घोषित नहीं है। इसमें नए मानव प्रतिभागियों पर सर्वेक्षण, प्रयोग या साक्षात्कार नहीं किए गए हैं। पांडुलिपि प्रकाशित साहित्य के आलोचनात्मक विश्लेषण पर आधारित है।

संदर्भ सूची

कौर, हरलीन। (2025)। भारतीय शास्त्रीय संगीत की लोकप्रियता में इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की भूमिका। स्वर सिंधु, 13(1), 87–89।

कुमार, मनोज। (2026)। संगीत के माध्यम से सामाजिक जागरण: भारतीय समाज का एक अध्ययन। स्वर सिंधु, 14(1), 80–83।

कुमारी, मीना, एवं शाह, राजेश। (2026)। संगीत और संगीत चिकित्सा का मनोविज्ञान। स्वर सिंधु, 14(1), 120–127।

गुप्ता, हनुमान प्रसाद। (2025)। संगीत एवं मनोविज्ञान: एक अंतःविषयी अध्ययन। स्वर सिंधु, 13(1), 432–437।

गुप्ता, हनुमान प्रसाद। (2026)। लोक संगीत का मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव: एक अध्ययन। स्वर सिंधु, 14(1), 226–231।

गुप्ता, रेनू। (2026)। गुरु-शिष्य परंपरा से डिजिटल युग तक संगीत शिक्षण की यात्रा। स्वर सिंधु, 14(1), 84–90।

गुप्ता, रीना, एवं रानी, प्रतिभा। (2026)। मनुष्य के स्वास्थ्य संवर्धन में संगीत की भूमिका: एक विवेचनात्मक अध्ययन। अनुसंधान: बहुविषयक अंतरराष्ट्रीय शोध पत्रिका (हिन्दी), 11(3–4), 61–66। https://doi.org/10.24321/2456.0510.202620

तिवारी, किरण। (2008)। संगीत एवं मनोविज्ञान। नई दिल्ली: कनिष्क पब्लिशर्स/डिस्ट्रीब्यूटर्स।

नाहर, साहित्य कुमार। (1999)। भारतीय शास्त्रीय संगीत: मनोवैज्ञानिक आयाम। दिल्ली: प्रतिभा प्रकाशन।

पाण्डेय, श्रियानी, एवं मिश्र, प्रेम किशोर। (2025)। आधुनिक भारतीय संगीत और मीडिया का अन्तः सम्बन्ध। स्वर सिंधु, 13(1), 462–465।

यादव, ममता। (2026)। रागों का मन एवं मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव। स्वर सिंधु, 14(1), 70–74।

वर्मा, सतीश। (2004)। संगीत चिकित्सा। दिल्ली: राधा पब्लिकेशन्स।

साहा, सुजाता। (2011)। विद्यालयीय पाठ्यक्रम और संगीत शिक्षा। भारतीय आधुनिक शिक्षा, 31(4), 32–37।

साहा, सुजाता। (2012)। भिन्न योग्यता के विद्यार्थियों हेतु संगीत शिक्षा के विशिष्ट लाभ। भारतीय आधुनिक शिक्षा, 32(4), 75–80।

सिंह, गुरजीत। (2026)। युवा पीढ़ी में ठुमरी के प्रति रुचि: एक सांस्कृतिक अध्ययन। स्वर सिंधु, 14(1), 111–114।

de Witte, M., Spruit, A., van Hooren, S., Moonen, X., & Stams, G.-J. (2020). Effects of music interventions on stress-related outcomes: A systematic review and two meta-analyses. Health Psychology Review, 14(2), 294–324. https://doi.org/10.1080/17437199.2019.1627897

McFerran, K. S. (2016). Contextualising the relationship between music, emotions and the well-being of young people: A critical interpretive synthesis. Musicae Scientiae, 20(1), 103–121. https://doi.org/10.1177/1029864915626968

Saarikallio, S., & Erkkilä, J. (2007). The role of music in adolescents' mood regulation. Psychology of Music, 35(1), 88–109. https://doi.org/10.1177/0305735607068889